कबीरजी के ३० जंत्र

जगाइये कया ? तो कहे प्रेम ।
प्रेम जगाये विरहकुं, विरह जगाये पिव,
पिव जगाये जीवकुं, वोहि पिव वोहि जीव.

किजीये कया ? तो कहे पुजा ।
पुंजा गुरुकी किजीये, सब पूजा जेहि मांय;
जब लग सिंचे मूख तरु, साखा पत्र अघाय ।

परखिये कया ? तो कहे शब्द ।
परखो द्वारा शब्दका, जो गुरु कहे बिचार;
बिना शब्द कछु ना मिले, देखो नयन निहार ।

करीये कया ? तो कहे संतसंग ।
करी नित सत संगके, बाधा सकऴ मिटाय,
ऐसा अवसर ना मिले, के दुर्लभ नर तन पाय ।

बोलीए कया ? तो कहे मिठा ।
मिठा सबसे बोलिये, सुख उपजे कछु ओर;
एहि वशीकरन मंत्र हय, तजीये बचन कठोर;
जे शब्दे दु:ख ना लगे, सोहि शब्द उच्चार;
तप्त मिटी शितल भया, सोहि शब्द तत् सार ।

बराइये क्या ? तो कहे झगरा ।
झगरा नित्य बराइये, झगरा बुरी बलाय ;
दु:ख उपजे चिंता दहे, झगरामे घर जाय ।

खाइये क्या ? तो कहे गम ।
गम समान भोजन नहिं, जो कोइ गमको खाय;
अमरीख गम खाइयां, दुरवासा विर लाय।

पिजीये क्या ? तो कहे तामस ।
तामस पि शितल भया, फिर कछु रही न प्यास;
भृगमुनि मारी लातसें, प्रभुपद ग्रह्यो ज्युं दास ।
क्षमा बडेको चाहिये, ओर छोटेकु उत्पात;
कहां बिष्णुंको घट गयो जो भृगमुनि मारी लात ।

छोडीये क्या ? तो कहे अभिमान ।
छोडे जब अभिमानको, सुखी भया तब जीव;
भावे कोइ कछु कहे, मेरे हदय निज पिव ।
अहन्ता न आनिये, जो हरि सिंहासन दे;
जो दिल आवे दिनता, तो सांइ अपना कर ले।

त्यागिये क्या ? तो कहे सबकछु ।
त्याग तो अैसा किजीये, सब कछु एकहि वार;
सब प्रभुका–मेरा नहीं, ए निश्चय बिचार ।
मेरा मुजमें कछुं नहि, जो कछु होय सो तेरा;
तेरा तुजको सोंपते, कया लगेगा मेरा ?

सुनिये क्या ? तो कहे गुण ।
सुनिये गुनकी बारता, अवगुण लिजीये नाही;
हंस क्षिरकुं ग्रहत हय, निर सो त्यागे जाय ।
काम कथा सुनिये नहि, सुनके उपजे काम;
कहे कबीर बिचारके, बिसर जाय हरि नाम ।

सांधीइ क्या ? तो कहे इंद्रियां ।
सांधे इंद्रिय प्रबलकु , जेइसे उठे उपाघ;
मन राजा बेहेकावते, पांचो बडे असाध।
पांच इंद्रि छठ्ठा मन, सत संगत सुचंत,
कहे कबीर जम क्या करे, जो पांचो गांठ निचंत ?

मारीए क्या ? तो कहे आशा ।
मारीए आशा आपनी, जीने डस्या संसार;
ताका औषध (सं)तोष हय, कहे कबीर बिचार ।
सात गांठ गोपीनकी, मनमां न आने शंक;
नाम अमल माता रहे, गणे इंद्रको रंक ।

राखिये क्या ? तो कहे धर्म ।
अपने अपने धर्म में, सब द्रढ हय सब काल;
निज धर्म जो आपन ग्रहो, सेहेजे भया नेहाल ।

घरिये क्या ? तो कहे धीरज ।
घीरज बुद्ध तब जानिये, समजे सबकी रीत;
उनका अवगुन आपमे, कबु न लावे मीत ।

ठेहेराइये क्या ? तो कहे मन ।
मन ठहेरा तब जानिये, अनसुज सबे सुजाय;
ज्युं अंधियारे भवनमे, दिपक बार देखाय ।

मिटाइए क्या ? तो कहे भ्रम ।
भ्रम मीटा तब जानीये, अचरज लगे न कोय;
ए लीला हय रामकी, नीरखो आपा खोय।

बडा पुन क्या ? तो कहे दया ।
पुन्य बडा उपकार हय, सबके उपर भाख;
जीव दया चीत्त राखीये, बेद पुरान शाख।

बडा पाप क्या ? तो कहे हिंसा ।
बडा पाप हय हिंसा, तेही समान न कोय;
धर्मराय जब लेखा मांगे, तब सब नौबत होय।

दिजीये क्या ? तो कहे दांन ।
भुखेको कुछु दिजीये, यथा शक्ति जो होय;
ता उपर शितल बचन, लखो आत्मा सोय ।

खुशबोइ क्या ? तो कहे जश ।
खुशबोइ जशकी भली, फयल रही चउ ओर;
मिल्या गिरी सुगंध, प्रगट सबे जग सोर ।

दुर्गंध क्या ? तो कहे अपजश ।
अपजशमें दुर्गंध हय, निको लगे न कोय,
जैसे मलके निकटमे, बेठ शके न कोय ।

लखिये क्या ? तो कहे (अपना) स्व ।
लखिये अपने रुपको, थिर भया सब अंग;
कहेन सुनन कछु ना रहि, जयुंका त्युं हय संग ।

लिजीये क्या ? तो कहे (हरी) नाम ।
नाम मिलावे रुपको, जे जन खोजी होय;
जब वोह रुप हिरदे बसे, सुधा रहे नव कोय।

देखिये क्या ? तो कहे आत्मराम ।
देखो सबमे राम हय, एक हि रस भरपुर;
जैसे उखते सब बनां, चिनी सक्कर गुर ।

पाइए क्या ? तो कहे सुख ।
सुख पावे गुरु दया तें, थिर भया मन मोर;
निरखो आपा सबनमें, केवळ नंद किशोर ।

होइए क्या ? तो कहे दास ।
होय रहे जब दास येह, तब सुख पावे अंत;
देख रीत प्रल्हादकी, देखीयो सबमे कंथ ।
दास कहावन कठण हय, में दासन को दास;
अब तो अैसा हो रहुं, के पांव तलेकी घास ।

होनी क्या ? तो कहे होनेहार
अनहोनी होय नहिं, होनी होय सो होय;
रामचंद्रजी बनकुं गयें, सुख अछत दु:ख होय।

मानीए क्या ? तो कहे सत ।
मानिये सब कछु सत हय, जो जाको वहेवार;
जन्म मरण दोउ बनां, थिर होय कर बिचार ।
सत गुरु सतका शब्द हय, जीने सत दिया बताय;
जो सतकु पकड रहे, सो सतहि मांहे समाय ।

बिचारीए क्या ? तो कहे तत्व् ।
जो ए तत्व बिचारके, राखे हैयेमे सोय;
सो प्राणी सुखको लहे, दु:ख न दरसे कोय ।